अमृत वाणी

अभिव्यक्ति की कुशल शक्ति ही तो कला है।

-मैथिलीशरण गुप्त,

ऐसी कार्यवाही बहुत जरूरी

प्रदेश के मुख्यमंत्री भूपेश बघेल ने महिलाओं की सुरक्षा और बुजुर्गों के सम्मान के लिए जो सख्त रवैया अपनाया है वह अवश्य ही सराहनीय है। मुख्यमंत्री ने हाल ही में आयोजित राज्य के गृह विभाग की समीक्षा बैठक में स्पष्ट निर्देश दिये है कि महिला अपराधों की रोकथाम के लिए राज्य स्तर पर सतत मॉनिटरिंग और समीक्षा की जाए। इसके लिए उन्होंने पुलिस महानिदेशक को निर्देश दिया है कि सभी जिलों में इन अपराधों की रोकथाम के लिए विशेष जांच दल का गठन भी किया जाए। मुख्यमंत्री ने सख्त हिदायत दी है कि महिला अपराधों के रोकथाम के प्रति किसी भी प्रकार की लापरवाही या चूक क्षम्य नहीं होगी।

यह मात्र औपचारिक घोषणा ही नहीं है बल्कि व्यवहार में सख्ती से कारगर होगा इसका साक्षात दृष्टांत भी तब सामने आया जब मुख्यमंत्री के निर्देश पर बैठक से पहले ही एक बड़ी कार्यवाही के तहत महिला संबंधी अपराधों की विवेचना में लापरवाही बरतने पर वाड्रफनगर के एसडीओपी ध्रुवेश जायसवाल और थाना प्रभारी रघुनाथनगर जॉन प्रदीप लकड़ा को तत्काल प्रभाव से निलंबित कर दिया गया।

निश्चित ही इस तत्काल कार्यवाही का पुलिस प्रशासन पर कुछ प्रभाव अवश्य पड़ेगा। दरअसरल हाल ही में प्रदेश में एक के बाद एक हुए गंभीर अपराध की घटनाओं ने सरकार की छवि को प्रभावित किया है। विपक्ष ने भी इसे अपना एक मुद्दा बनाकर सरकार पर छींटाकसी की है। महिलाओं के साथ ज्यादती के साथ इन मामलों में स्थानीय पुलिस कर्मियों की लापरवाही से मुख्यमंत्री विशेष तौर पर नाराज है। कहने की जरूरत नहीं कि पुलिस का ऐसा उदासीन रवैया या पीड़ित पक्ष के प्रति असहयोगपूर्ण व्यवहार ही अपराधिक तत्वों की हौसला अफजाई करता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अगर पुलिस चाहे तो अपराध और अपराधिक तत्वों पर प्रभावी रूप से नकेल कसना मुश्किल नहीं है। मुख्यमंत्री की भी मंशा यही है। वे चाहते है कि पुलिस राज्य में महिला सुरक्षा सुनिश्चित करे। इन मामलों में न कोई ढिलाई और न कोई लापरवाही हो।

जैसा भी हो, राज्य के मुखिया का इस संदर्भ में यह सख्त रूख एक ओर अगर पुलिस प्रशासन के लिए गंभीर चेतावनी है तो दूसरी ओर महिलाओं लिए एक बड़ा आश्वासन। आशा की जानी चाहिए कि मुख्यमंत्री के सख्त कदम के बाद राज्य में महिला अपराधों में कमी अवश्य आएगी।

राज-काज

पल्ला न झाड़े सरकार

लॉकडाउन के दौरान अमानवीय परिस्थितियों में भीषण तकलीफें झेलते हुए अपने-अपने गांवों की ओर सफर करने के क्रम में जान गंवाने वाले प्रवासी मजदूरों के प्रति केंद्र सरकार का जो रुख सामने आया है वह न केवल गैरजिम्मेदार और संवेदनहीन है बल्कि एक लोकतांत्रिक देश के लिए शर्मनाक भी है। लॉकडाउन के बहुचर्चित फैसले के बाद आयोजित संसद के इस पहले सत्र में प्रवासी मजदूरों का यह मसला स्वाभाविक रूप से उठा। एक सांसद के सवाल के लिखित जवाब में सरकार ने माना कि उस दौरान एक करोड़ से ज्यादा मजदूर देश के अलग-अलग हिस्सों से बदहवासी के आलम में अपने अपने गांवों की ओर चल पड़े थे। मगर इसके साथ ही उसका कहना है कि इस यात्रा में जान गंवाने वाले मजदूरों का कोई आंकड़ा उसके पास नहीं है, इसलिए उन मृतकों के परिजनों को मुआवजा देने का सवाल ही नहीं उठता। यह भी गौर करने की बात है कि सरकार ने अचानक शुरू हुए उस पलायन के लिए फेक न्यूज को जिम्मेदार ठहराया है।

ड्रैगन के क्रुर पंजों में फंसता नेपाल

चीन की विस्तारवादी नीतियों के कारण जहां एलएसी पर अप्रैल माह से ही तनावपूर्ण हालात हैं, वहीं चीन की गोद में खेल रहा नेपाल भी अब चीन की इन्हीं नीतियों का शिकार हो रहा है। हाल ही में यह खुलासा होने के बाद कि चीनी सैनिकों ने नेपाल के हुमला जिले में सीमा स्तंभ से दो किलोमीटर अंदर तक कब्जा कर लिया है, चीन में हंगामा मचा है। दरअसल ड्रैगन नेपाल के इस इलाके में अब तक नौ भवनों का निर्माण कर चुका है। यही नहीं, उसके सैनिकों ने यहां नेपाली नागरिकों के आने-जाने पर भी पाबंदी लगा दी है। जैसी कि ड्रैगन की फितरत रही है कि वह किसी भी देश की जमीन कब्जाने के बाद दादागिरी दिखाते हुए उसे अपना ही भूभाग बताता है, ऐसा ही दावा उसने नेपाली जमीन कब्जाने के बाद भी किया है। हालांकि नेपाली अधिकारियों का कहना है कि चीन ने नेपाली भूमि में अतिक्रमण करते हुए इसारतें बनाई हैं लेकिन ड्रैगन का दावा है कि उसने जहां इसारतें बनाई है, वह उसका अपना भूभाग है। गौरतलब है कि नेपाल के सीमावर्ती करनाली प्रांत के दूरस्थ हुमला जिले में दो वर्ष पूर्व तक चीन सीमा पर केवल तीन ही भवन थे लेकिन चीनी सेना पीएलए अब यहां नौ वाणिज्यिक भवन बना चुकी है।

नेपाली जनता के प्रबल रोष का सबसे बड़ा कारण यही है कि तरफ नेपाल से नजदीकियां बढ़ाने की आड़ में चीन नेपाल में अपना आधार मजबूत कर वहां की जमीन हथियाने के मंसूबे पूरे करने के प्रयासों में जी.जान से जुटा है, वहीं उनके प्रधानमंत्री केपी शर्मा ओली सब कुछ जानते-समझते हुए भी चुप्पी साधे हैं। उनके मौन समर्थन का ही नतीजा है कि नेपाल ड्रैगन के कब्जे पंजों में फंसता जा रहा है और नेपाल को चीन से उनकी यह दोस्ती बहुत महंगी साबित हो रही है। चीन बेकाबू होकर नेपाली जमीनें हथिया रहा है और तिब्बत में सड़क निर्माण के नाम पर भी नेपाली भूमि का अतिक्रमण कर रहा है। हालांकि नेपाली जनता विरोध प्रदर्शन कर रही है क्योंकि उसका मानना है कि चीन अपनी इन्हीं विस्तारवादी नीतियों के चलते एक दिन तिब्बत की ही भांति नेपाल को भी हड़प लेगा लेकिन ओली सरकार नेपाली गांवों पर चीन के अवैध कब्जों के बावजूद खामोश है क्योंकि वह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को नाराज करने का जोखिम मोल नहीं लेना चाहती। ओली और उनकी पार्टी चीनी सत्ता पर काबिज शी जिनपिंग की पार्टी की विचारधारा की ही समर्थक है। इसी कारण ओली ने चीन से प्रेम की पींगें बढ़ाते हुए भारत से दूरियां बढ़ानी शुरू की थी। भारत के इसी विरोध के चलते ओली ने नेपाल के हिन्दू राष्ट्र का दर्जा भी खत्म किया था।

इसी साल जून माह में विपक्षी नेपाली कांग्रेस के सांसदों ने आरोप लगाया था कि चीन ने देश के दोलखा, हुमला, सिंधुपालचौक, संखुवासभा, गोरखा और रसुवा जिलों में 64 हेक्टेयर भूमि का अतिक्रमण किया है। नेपाली कांग्रेस द्वारा नेपाली संसद के निचले सदन में रेजोल्यूशन पेश करते हुए ओली सरकार से चीन की छीनी हुई जमीन वापस लेने को भी कहा गया था। ओली सरकार पर आरोप लग रहे हैं कि नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी एनसीपी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी सीसीपी को बचाने की हरसंभव कोशिश कर रही है। नेपाली जमीनों पर चीनी कब्जों के बावजूद अगर नेपाली विदेश मंत्री प्रदीप ग्यवली कहते रहे हैं कि नेपाल का सीमा विवाद चीन के साथ नहीं बल्कि भारत के साथ है तो समझा जा सकता है कि नेपाल में निर्णय लेने की क्षमता पर किस कदर चीनी दबाव हावी है।

दो नेपाली एजेंसियों द्वारा नेपाली जमीन हड़पने की खबरों के अलावा हाल ही में नेपाल के कृषि मंत्रालय के सर्वेक्षण विभाग की एक रिपोर्ट में भी खुलासा हुआ है कि ड्रैगन सात सीमावर्ती जिलों में फैले कई स्थानों पर नेपाल की जमीनों पर कब्जा कर चुका है। सर्वे डिपार्टमेंट ऑफ,ग्रीकल्चर मिनिस्ट्री की रिपोर्ट में स्पष्ट कहा गया है कि चीन तेजी से आगे बढ़ रहा है और ज्यादा से ज्यादा जमीन का अतिक्रमण कर रहा है। रिपोर्ट में 33 हेक्टेयर दायरे में फैले उन 10 इलाकों का भी जिक्र है, जहां चीन ने बागडोरे खोला, करनाली, सिनजेन, भुरजुक, जंबुआ खोला इत्यादि नदियों का रुख मोड़कर नेपाली जमीनें कब्जाई हैं। इन चार नेपाली जिलों में अधिकांश क्षेत्र नदियों के जलग्रहण क्षेत्र हैं, जिनमें हुमला, कर्णली, संजेन, लेमडे, भृजुग, खारेन, सिंधुपालचौक, भोटेकोसी, जाम्बु नदीय कामाखोला, अरूण नदी प्रमुख हैं। नेपाल के सर्वे और मैपिंग विभाग का कहना है कि चीन द्वारा अंतर्राष्ट्रीय सीमा को नेपाल के दोलखा में 1500 मीटर अंदर धकेल दिया गया है। इस विभाग के मुताबिक चीन ने गोरखा और दारचुला जिलों में नेपाली गांवों पर कब्जा कर लिया है।

अपने ही मंत्रालयों और सरकारी विभागों की ऐसी रिपोर्टें सामने आने के बाद भी अगर प्रधानमंत्री ओली चीन की गोद में खेल रहे हैं तो हैरानी होती है। भारत ने चीन को सदैव अपना छोटा भाई मानते हुए हर कदम पर उसकी मदद की है जबकि चीन की विस्तारवादी नीतियों और नेपाली जमीनों पर कब्जे की चीनी नीति से ओली भी अनजान नहीं हैं लेकिन अगर पिघ भी वे राष्ट्रहितों को दरकिनार कर भारत से दुश्मनी बढ़ाने पर उतारू हैं तो यह तय है कि चीन से उनकी यह दोस्ती उनके देश को अंततः बहुत महंगी पड़ने वाली है। ओली कुछ महीनों से जिस प्रकार चीन की ही बोली बोलकर भारत जैसे उसके हितैषी और परम मित्र देश के साथ भी दुश्मनी मोल लेने पर उतारू दिखाई दिए हैं, उसका उन्हें के देश में प्रबल विरोध हो रहा है। नेपाली नागरिक मानने लगे हैं कि चीन भारत के खिलाफअपनी स्थिति मजबूत करने के लिए नेपाल को मोहरा बना रहा है और नेपाली जमीनें कब्जाकर भारत तक अपनी पहुंच आसान करना चाहता है। ड्रैगन के इशारों पर ओली के नाचने का सबसे बड़ा कारण यही है कि वे नेपाल में अपनी सत्ता बचाए रखने के लिए ड्रैगन का सहारा ले रहे हैं और ड्रैगन उनकी इसी मजबूरी का भरपूर लाभ उठा रहा है। भारत द्वारा पूरी दुनिया के समक्ष चीन के विस्तारवादी प्लान की पोल खोले जाने और चीन द्वारा लगातार नेपाली जमीनों पर कब्जे किए जाने के बाद भी अगर ओली को सद्बुद्धि नहीं मिल रही है तो यह नेपाली जनता का दुर्भाग्य ही है, जिनकी सरकार चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की कठपुतली की भांति कार्य कर रही है।

योगेश कुमार गोयल
(ये लेखक के अपने विचार है)

नफरत के आइटम

मध्य प्रदेश से निकले आइटम की गूँज पूरे देश में सुनाई दे रही है। एक पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ के मुंह से पूरे नफरत के इस बोल को दूसरे नेताओं ने पटाफ़ दबोच लिया। आश्चर्य की बात तो यह है जिस महिला को आइटम बताया गया वह पहले उनकी कैबिनेट में मंत्री रही है। पार्टी बदलते ही नफरत सियासत पर हावी हो गयी। सम्बद्ध महिला नेता ने पलटवार करते हुए कह दिया की कमलनाथ की पार्टी की बड़ी महिला नेता को आइटम कह दिया होता तो अब तक बवाल मच गया होता।

हमारे नेताओं के भाषणों, वक्तव्यों और ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफ़ार्म पर सुचिता के स्थान पर नफरत, झूठ, अपशब्द, तथ्यों में तोड़-मरोड़ और असंसदीय भाषा का प्रयोग धड़ल्ले से होता देखा जा सकता हैं। हमारे नेता अब आए दिन सामाजिक संस्कारों और मूल्यों को शर्मसार करते रहते हैं। विशेषकर 2014 के चुनाव के दौरान और उसके बाद नफरत की सियासत में तेजी आ गयी। स्वस्थ आलोचना से लोकतंत्र सशक्त, परंतु नफरत भरे बोल से कमजोर होता है, यह सर्व विदित है। आलोचना का जवाब दिया जा सकता है, मगर नफरत के आरोपों का नहीं। चुनाव आते ही हमारे नेताओं की बांछे खिल जाती है। मंच और भीड़ देखते ही सियासत की तकदीर लिखने लगते है। भाषणों में नफरत के तीर चलने लग जाते है। बंद जुबाने खुल जाती है। सियासी शत्रुता के गुब्बार फूटने लगते है। नीतियों और मुद्दों की बाते गौण हो जाती है।

आज हालत यह हो गयी है की देश में कोई भी वारदात घटित हो जाती है तो तुरत फुरत में ऐसे ऐसे बयानवीर और उनके जहरीले बयानों का देश को सामना करना पड़ता है जिसे पढ़ और सुनकर सिर न केवल शर्म से झुक जाता है अपितु लोकतंत्र की बुनियाद भी कमजोर होने का खतरा मंडराने लगता है। कई बार तो इन दुर्भाग्य पूर्ण घटनाओं से सीधे प्रधान मंत्री का नाम जोड़ कर निंदा के बयानों की झड़ी लग जाती है। प्रधान मंत्री पर हमले को उनकी पार्टी के लोग बर्दास्त नहीं कर पाते और पलटवार के रूप में जिस भाषा का प्रयोग होता है उसे भी जायज नहीं ठहराया जा सकता। यहाँ हम बयानवीरों के नाम और उनके वक्तव्यों का उल्लेख नहीं करना चाहते मगर यह अवश्य कहना चाहते है नफरत की यह सियासत हम सब के लिए उचित नहीं है इससे देश कमजोर होता है। प बंगाल में अगले साल विधान सभा चुनाव है। वहां सियासी दलों में भयंकर मारकाट मची है। बिहार में विधान सभा चुनाव के नगाड़े बज चुके है और नफरत के बोलों से लोकतंत्र का मखौल उड़ाया जा रहा है। हाथरस कांड में नफरत और घृणा का जैसा घमासान देखने को मिला वह दुर्लभतम उदाहरणों में से एक है। इस दुर्भाग्य पूर्ण और निंदनीय कांड को भुनाने के लिए नेताओं ने जिन शब्दों का इस्तेमाल किया वे निश्चय ही लोकतंत्र को कमजोर करने वाले है। कश्मीर के नेताओं ने तो दुश्मन देश से सहायता का बयान दे डाला। इससे पूर्व नागरिकता कानून के विरोध में हुए आंदोलन में नफरत का खुलकर इजहार किया गया। इस दौरान खबरिया चैनलों ने आग में घी डालने का काम किया है। स्वस्थ और रचनात्मक बहस का स्थान घृणात्मक और नफरत से ओतप्रोत वाद विवाद ने ले लिया है।

देश में नफरत की भावना का प्रसार बड़ी तेजी से हो रहा है। या यूँ कहे समाज में कुछ लोग ऐसे है जो किसी भी हालत में सद्भावना और प्यार महोब्बत को मिटाने पर तुले हुए है। इनमें उनके निहीत स्वार्थ है। आज पक्ष और विपक्ष में मतभेद और मनभेद की गहरी खाई है। यह अंधी खाई हमारी लोकतान्त्रिक परम्पराओं को नष्ट भ्रष्ट करने को आतुर है। भारत सदा सर्वदा से प्यार और मोहब्बत से आगे बढ़ा है। हमारा इतिहास इस बात का गवाह है हमने कभी नफरत को नहीं अपनाया। हमने सदा सहिष्णुता के मार्ग का अनुसरण कर देश को मजबूत बनाया। देश में व्याप्त नफरत के इस माहौल को खत्म कर लोकतंत्र की ज्वाला को पुर्नस्थापित करने की महती जरूरत है और यह तभी संभव है जब हम खुद अनुशासित होंगे और मर्यादा की लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन नहीं करेंगे।

बाल मुकुन्द ओझा
(ये लेखक के अपने विचार है)

बिलासपुर। जहां तक मुझे याद है, नवीनतम खबरें सुनने-पढ़ने का काफी शौक रहा है। जूनियर स्कूल के दिनों में भी चाय से अखबारें पढ़ा करता था। हम पुणे (तब पूना) में रहते थे और मैं क्षेत्रीय अखबार 'पी प्रेस जरनल' पढ़ा करता था। उन दिनों ऑल इंडिया रेडियो से रात 9 बजे की खबरें सुनना नित्यकर्म था, यह ऐसा अनुष्ठान था, जिसे मेरे पिताजी शायद ही छोड़ते थे। मैलेविले डि-मैलो की आवाज में इंग्लिश की और हिंदी में देवकीनंदन पांडे के स्वर में खबरें सुनना सुखद था। उच्चारण बहुत उम्दा-सटीक था, खबरों की सामग्री ठोस-स्पष्ट हुआ करती थी। खबरों के दौरान विशेषज्ञ की राय रूपी व्यवधान नहीं होता था। ऑल इंडिया रेडियो के अलावा बीबीसी या वॉयस ऑफ अमेरिका को सुनने का विकल्प था। बड़े लोगों की ज्वलंत मुद्दों पर होने वाली बातचीत हम बच्चों के कानों में भी पड़ती थी, अनुशासन रखते हुए हम अपनी आवाज भीमी रखते थे। विभिन्न विषयों पर चर्चाएं हमें दुनियाभर की सैर करवा सुखद अनुभूति देती थी। उस दौर में राजनीति, साहित्य, कला, खेल जगत इत्यादि विषयों पर चर्चाएं होती थीं। संपादकीय पन्नों को पढ़कर हमें बहुत कुछ जानने को मिला। लेखकों में पत्रकारिता के धुरंधर जैसे कि फ्रैंक मोरेज, चलापति राजू, सीआर ईरानी, गिरिलाल जैन, खुशवंत सिंह इत्यादि थे। समसामयिक घटनाओं का सटीक विश्लेषण वाले लेख विषय को गहराई से समझने-मनन करने को प्रेरित करते थे। आगे पढ़ने-जानने की उत्कंठा भी जगाते थे। कालांतर टेलीविजन के दौर में स्वदेशी चैनल 'दूरदर्शन' आया, जो कमोबेश ऑल इंडिया रेडियो का दृश्य-श्रव्य रूपांतरण था। हालांकि, खबरें ज्यादातर एकतरफा होती। फलतः दूरदर्शन का एकछत्र राज कमजोर हुआ और निजी चैनल आए। बाद में विदेशी चैनल भी पहुंचे। आज राष्ट्रीय स्तर के हिंदी- इंग्लिश चैनलों के अलावा क्षेत्रीय भाषाओं और अंतर्राष्ट्रीय चैनल भी हैं। विडंबना यह है कि अपवाद स्वरूप कुछेक ऑनलाइन वेबसाइटों और टीवी चैनलों को छोड़कर ज्यादातर अतिरंजित खबरें प्रसारित कर रहे हैं। पहले मंत्र था– खबरें सही हों, आकलन आप जैसा चाहे करें। यह बात प्रिंट मीडिया और टीवी पर लागू थी। जबकि आज भिन्न चैनलों पर एक ही घटना के अलहदा रूपांतरण दिखते हैं और साथ ही अजीबोगरीब विश्लेषण। आमतौर पर पैनल विशेषज्ञों में ज्यादातर राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि, सेवानिवृत्त नौकरशाह, पत्रकार और कथित विशेषज्ञ होते हैं। जानकार तो नाममात्र के होते हैं। एंकर शो का कमांडर-इन-चीफ बनकर बैठता है और चीखकर चर्चा की अगुवाई करता है और विपक्षी वक्ताओं पर हावी होकर उन्हें बोलने नहीं देता। चैनल का स्टूडियो रणभूमि में तब्दील हो जाता है। अलहदा विचार वाले विशेषज्ञ तक को भी धमकाकर चुप कराया जाता है। फलतः अनावश्यक शोर से वार्ता सार्थक नहीं रह जाती। एंकर का राजनीतिक रुझान और विशेषज्ञों का चयन वार्ता के निष्कर्षों पर सवाल उठाता है। इन तमाशों में सुर, शब्दावली और साम्राज्ञी इतनी गलीज होती है कि एक सभ्य नागरिक हेतु यातना जैसा होती है। दर्शकों का विचारधारा विशेष का वर्ग कार्यक्रम से जुड़ा रहता है, बाकी के अन्य संजीदा चैनलों की तलाश में लग जाते हैं। लेकिन असल खबरिया चैनल हैं कहां जिसे देखो तीक्ष्ण संवाद कर रहा होता है। ऐसे में बीबीसी, सीएनएन इत्यादि चैनल का विकल्प रह जाता है। लेकिन वे भारत के बारे में ज्यादा खबरें नहीं दिखाते। आजकल सुशांत राजपूत की आत्महत्या प्राइम टाइम पर छाई हुई है। हालांकि, फिल्मों की ज्यादा जानकारी न रखते हुए भी इतना समझता हूं कि वह एक उम्दा अभिनेता थे और उनकी मृत्यु फिल्म उद्योग के लिए क्षति है। लेकिन यदि उनके परिजनों को मृत्यु के कारणों को लेकर कोई संशय था तो उन्हें पहले पुलिस से शिकायत करनी चाहिए थी ताकि जांच हो सके।

जिक्र करना चाहूंगा कि मुंबई पुलिस आज भी भारत के सर्वोत्तम पुलिस बलों में एक गिनी जाती है और जांच की अर्जी दाखिल किए जाने से पहले ही उसकी ईमानदारी पर शक का कोई कारण नहीं था। क्यों बिहार सरकार इस मामले में इतना दखल दे रही है और इसमें सीबीआई या प्रवर्तन निदेशालय का क्या काम था आखिर क्यों टीवी चैनलों ने इसे चौबीसों घंटे दिखाए जाने वाला तमाशा बनाया क्या मौजूदा मुश्किल समय में ऐसा मीडिया-ट्रायल चलाना सच में ऐसा मुद्दा है या फिर दर्शकों के ध्यान को 'पाइड पाइपर' नामक कहानी के चूहों की भांति बरगलाकर गुफा में बंद करने को भरमाया जा रहा है, जिन्हें बीन वादक अपनी धुन से सम्मोहित कर हांक ले गया था निजी घरानों के मीडिया चैनलों की राजनीतिक आकाओं के प्रति स्वामी-भक्ति दिखाने के खेल की जांच करने की जरूरत है। अब मैं कोविड महामारी, भुला दिए गए आप्रवासी पलायन, लद्दाख क्षेत्र में चीन एवं पाकिस्तान से लगती वास्तविक सीमा नियंत्रण रेखाओं पर दुरूह क्षेत्रों में बैठे जवानों और बिखरी अर्थव्यवस्था एवं इससे उपजी भयंकर बेरोजगारी पर बात करूंगा। आखिर खबरिया चैनलों के तुर्रमखां एंकरों ने पैदल पलायन को मजबूर हुए मजदूरों के साथ कितनी दूर तक चलना गवारा किया था प्रवासी श्रमिक अब कहां-किस हालात में हैं पैनल पर आने वाले कितने विशेषज्ञों ने स्वयं अस्पतालों का दौरा कर कोविड इलाज की हकीकत को जाना बाहरी खोतों से अस्पतालों की जो डरावनी खबरें मिल रही हैं, क्या वह सही हैं कुर्सी पर बैठकर पराक्रम दिखाने वाले एंकरों में कितनों ने मोर्चों पर सचमुच पहुंचकर खबरें की हैं कि सीमा पर जवान किन हालातों में जी और लड़ रहे हैं कैसे वे बर्फीले मौसम में अपना बचाव करेंगे देश की अर्थव्यवस्था में आज तक की बड़ी गिरावट और नौकरियों की छंटनी से जीवनयापन को हुआ नुकसान कितना गहरा है क्या मुद्दे प्राइम टाइम पर चर्चा लायक नहीं हैं मेरे मीडिया के मित्रों, लद्दाख में संभावित लड़ाई, कोरोना से पैदा हुई चुनौतियां और गिरती अर्थव्यवस्था का मुकाबला हम स्टूडियो में बैठकर चिल्लाने से नहीं कर सकते, इससे पार पाने को तो मैदान में उतरना होगा। उसके लिए आपको एक संजीदा और जनता को सही खबर देने वाला प्रेरक चेहरा बनना होगा। राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों को खबरों का मुख्य बिंदु बनाइए न कि सच को ढांपने के लिए बनाए गए सरकारी आंकड़ों और विज्ञप्तियों की आड़ लें। न ही बॉलीवुड की चटपटी कहानियों के शोर में इन्हें भुलाने का इंतजाम करें। शुक्र है कि अभी भी प्रिंट मीडिया में अपवादस्वरूप कुछ सम्माननीय प्रकाशन बचे हुए हैं जो पत्रकारिता के दुर्गं को बचाए हुए हैं। लोकतंत्र का चौथा स्तंभ आज हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था का गैर-सरोकारी अंग बनकर रह गया है। इसका काम भ्रष्टाचार, मिथ्या सूचनाओं और फरेब को उजागर करने वाला प्रहरी बनना है।

गुरबचन जगत
(ये लेखक के अपने विचार है)

वक्त की नजाकत समझ जिम्मेदारी निभाए मीडिया

गीत

कोई और नहीं था ए! साथी
वो मात पिता का साया था।

अपने जीवन की कश्ती को जिसने
भवरों के संग गुजारा था
कोई और नहीं था ए! साथी
वो मात पिता का साया था।
क्यो भूलें उन बाहों को जिनने
झूले हमें झुलाए थे
गम की रातों में जिन होठों ने
लोरी के गीत सुनाये थे
वो हम ही थे इस सुने जग में
जो आसमान का तारा था
मेरी सूरत के बिन जीवन उनका
जलता बुझता अंगारा था।

अपने जीवन की कश्ती को जिसने
भवरों के संग गुजारा था
कोई और नहीं था ए!साथी
वो मात पिता का साया था।

हम खेल खिलौनों से खेले
वे हरदम दुख पीड़ा झेले
बनकर ऊँट कभी हथी
बनकर के बचपन के साथी
मस्ती से खेल खिलाया था
जब रातों में हम रोए कभी
डर के भय से ना रोए कभी
देकर के गालों पर थपकी
नैनों का दीप जलाया था।

अपने जीवन की कश्ती को जिसने
भवरों के संग गुजारा था
कोई और नहीं था ए!साथी
वो मात पिता का साया था।

पृथ्वी जीवन देती हमको
बादल ने फूल खिलाये हैं
जीवन की हँसती कलियों ने
अनुपम उपहार बिछाए हैं
दुनियाँ में जो पाया हमने
कर्मों का लेखा जोखा है
एक मात पिता का दिल ही है
जो बिन खातों के देता है
जीवन परिपूर्ण हुआ उनका
जो लेता उनकी दुआएँ है

अपने जीवन की कश्ती को जिसने
भवरों के संग गुजारा था
कोई और नहीं था! साथी
वो मात पिता का साया था।

बृजभूषण वर्मा
(ये लेखक के अपने विचार है)